इकाई 2 अवस्थितियाँ

संरचना

हर्षदा राठौड़

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 शहरीकरणः पृष्ठभूमि

2.3.1 शहरीकरण की प्रक्रिया

2.3.2 शहरीकरण की प्रवृत्तियां

2.4 शहरीकरण के मुद्दे

2.5 शहरीकरण और प्रवसन

2.6 प्रवसन के कारण

2.7 प्रवसन के प्रभाव

2.8 महिलाएँ और प्रवसन

2.9 सारांश

2.10 शब्दावली

2.11 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

2.12 सन्दर्भ

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

वैतनिक श्रम में महिलाओं की सहभागिता से संबंधित मुद्दों के बारे में पढ़ने के बाद इस इकाई में आप उन शक्तियों के बारे में पढ़ेंगे जो महिलाओं की सहभागिता को प्रभावित करती हैं। इकाई शहरीकरण की व्याख्या करते हुए और भारत में शहरीकरण की क्या प्रवृत्तियां रही हैं से शुरू होती है। इसके आगे आप पढ़ेंगे कि कैसे शहरीकरण प्रवसन में परिणत हुआ और ग्रामीण तथा इसने शहरी क्षेत्रों में श्रम सहभागिता को प्रभावित किया। बाद में आप इसके कारणों, इसके प्रभावों और इस प्रवाह को रोकने के रास्तों के बारे में पढ़ेंगे और प्रवासी महिलाओं की आर्थिक भूमिका पर चर्चा करते हुए और उसके बाद शहरीकरण के घटकों और मुद्दों पर बात करते हुए इकाई समाप्त हो जाती है।

आइए, हम इस इकाई को पढ़ने के उद्देश्यों से अवगत हो लें।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप सक्षम होंगेः

- शहरीकरण और प्रवसन को परिभाषित करने में;
- प्रवसन की प्रवृत्तियों, वृद्धि, कारण और प्रभाव पर चर्चा करने में; और
- शहरीकरण और प्रवसन के बीच संबंधों की व्याख्या करने में।

2.3 शहरीकरणः पृष्ठभूमि

तीव्र शहरीकरण बीसवीं शताब्दी में विश्वव्यापी परिघटना रही है। भारत जैसे विकासशील देशों में, शहरीकरण की चुनौती शहरी गरीबी के सन्दर्भ में बहुत गम्भीर हो जाती है जो कि वस्तुतः ग्रामीण गरीबी का विस्तार ही है। आंतरिक प्रवसन और विशेष तौर पर ग्रामीण-शहरी प्रवसन का विश्लेषण न सिर्फ शहरीकरण की प्रक्रिया बल्कि आर्थिक विकास की समग्र प्रक्रिया को समझने के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

शहरीकरण का सुनियोजित अध्ययन यहां तक कि विकसित देशों में भी बिल्कुल हाल की परिघटना है। भारत में, कुछ चुने हुए शहरों में सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण का संचालन करने के प्रयास समय-समय पर किए गए हैं। नगर नियोजकों ने भी शहरी नियोजन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए तमाम शहरों में विशिष्ट प्रकार के सर्वेक्षण करवाए हैं। परन्तु भारत में ऐतिहासिक, जनसांख्यिकीय, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से शहरीकरण का एक प्रक्रिया के रूप में अध्ययन करने का मुश्किल से ही कोई प्रयास कभी हुआ होगा।

सबसे पहले 1961 में आर्थिक वृद्धि संस्थान के जनसांख्यिकीय अनुसंधान केन्द्र ने इस मामले में पहल की और विशेष रूप से जनसांख्यिकीय दृष्टिकोण से आंतरिक प्रवसन और शहरीकरण पर अध्ययनों की एक श्रृंखला की शुरुआत की।

बोस (1973) के अनुसार प्रत्येक दशक में अकाल, प्लेग, इन्फ्लुएंजा महामारी, युद्ध और बंटवारे जैसे कारक रहे जो शहरी परिदृश्य पर हावी रहे। 1951-61 का दशक एक मायने में औद्योगिक विकास के सन्दर्भ में शहरीकरण का पहला सामान्य दशक था और फिर भी इस दशक के दौरान शहरी जनसंख्या की वृद्धि अधिकांश विद्वानों द्वारा पूर्वानुमानित दर से बहुत कम था, जिन्होंने भारी पैमाने पर ग्रामीण से शहरी प्रवसन और परिणामस्वरूप शहरी विस्फोट का अनुमान किया था (बोस में उद्धृत, 1980)।

जनसंख्या वृद्धि की तीव्र दर अपने आप में एक कारक है जो शहरों में जनसंख्या के प्रवसन को सीमित करता है; शहरी श्रम बाजार में लगातार बने रहने वाले बेरोजगार और अल्परोजगारयुक्त लोगों की संख्या के चलते ग्रामीण श्रम शहरी क्षेत्रों की ओर प्रवास करने की हिम्मत नहीं कर पाता।

औद्योगीकरण का प्रभाव 1961–71 के दशक में महसूस होना शुरू हुआ जो तेजी से हो रहे शहरीकरण से पता चला और विशेष रूप से औद्योगिक शहरों, पत्तन कस्बों और सभी दस लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों की संख्या में तेजी से वृद्धि से। इसमें एकमात्र अपवाद कलकत्ता का था जो अपनी संतृप्ति की अवस्था में पहुंच चुका था।

बॉक्स सं. 2.1

> तीव्र शहरीकरण के सामने छोटे और मध्यम कस्बों की स्थिरता और विकासहीनता औपनिवेशिक काल से ही निरंतर चलती रहने वाली परिघटना है और उद्योगों के बिखराव, वृद्धि के केन्द्रों के विकास हेतु नई रणनीतियों इत्यादि के बावजूद शहरी परिदृश्य पर बड़े शहरों का दबदबा लगातार कायम रहा।

अब हम शहरीकरण की प्रक्रिया के बारे में पढ़ेंगे।

2.3.1 शहरीकरण की प्रक्रिया

जनसांख्यिकीय अर्थों में शहरीकरण, शहरी जनसंख्या (यू) का कुल जनसंख्या (टी) से अनुपात में एक निश्चित अवधि के दौरान बढ़ोत्तरी से है। जब तक यू/टी बढ़ता रहता है, तब तक शहरीकरण कहलाता है। हालाँकि, सैद्धांतिक रूप से यह संभव है कि यह अनुपात कुछ समयावधि तक स्थिर बना रहे वैसी स्थिति में जबकि ग्रामीण से शहर की ओर प्रवास निरपेक्ष तौर पर नहीं हो रहा हो और ग्रामीण तथा शहरी जनसंख्या दोनों समान दर से बढ़ रही हों। इस तरह के मामले में कहा जाएगा कि यह बिना शहरीकरण के शहर में वृद्धि है।

इस प्रकार, शहरीकरण की प्रक्रिया निरंतर या सतत चलने वाली प्रक्रिया है जो केवल औद्योगीकरण की सहगामी नहीं है बल्कि यह आर्थिक वृद्धि और सामाजिक रूपांतरण की प्रक्रिया में अन्तर्निहित कारकों के सम्पूर्ण विस्तार से संबद्ध है।

निःसंदेह नगर-नियोजन बहुत महत्वपूर्ण है परन्तु शहरों के लिए मास्टर प्लान तैयार करना तब तक फिजूल का काम बन चुका है जब तक कि शहरीकरण के अर्थशास्त्र पर विचार न किया गया हो और शहरी अवसंरचना की लागत को ध्यान में न रखा गया हो। संक्षेप में शहरीकरण को निश्चित तौर पर आर्थिक वृद्धि के एक पहलू की तरह देखना पड़ेगा। हाउसिंग उपागम का एक प्रभाव यह भी है कि शहरीकरण का समाधान शहरों की ओर प्रवासन को हतोत्साहित करने में ढूंढ़ा जाता है, वह भी इस तथ्य की अवहेलना करते हुए कि मकानों की कमी केवल महत्वहीन मध्यम-वर्ग के लोगों को डरा सकती है, बड़ी तादाद में उन प्रवासियों को नहीं, जो ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों की ओर आते जा रहे हैं।

2.3.2 शहरीकरण की प्रवृत्तियां

भारत के महापंजीयक और जनगणना आयुक्त के कार्यालय ने वर्ष 2011 के लिए शहरी जनसंख्या का प्रक्षेपित आंकलन 35.8 करोड़ किया है और आंकलन किया था कि शहरी जनसंख्या की वृद्धि दर 1991–2001 के दशक के दौरान रिकॉर्ड किए गए 2.75 प्रतिशत प्रति वर्ष से घटकर 2001–2011 के दौरान 2.23 प्रतिशत प्रति वर्ष रह जाएगा (महापंजीयक एवं जनगणना आयुक्त, 2006)। शहरी विशेषज्ञों का भी विश्वास है कि भारत के शहरीकरण की दर, इसकी अपवर्जीकरण प्रकृति और ग्रामीण से शहरी प्रवसन को प्रोत्साहित कर पाने की अक्षमता के चलते, धीमी हो जाएगी (कुण्डु 2007, 2011)। हालाँकि, 2011 की जनगणना ने कुछ अनपेक्षित परिणाम दिखलाए हैं।

2011 की जनगणना के अनुसार, 2001–2011 के दौरान 2.8 प्रतिशत प्रति वर्ष की वृद्धि दर दर्शाते हुए शहरी जनसंख्या बढ़कर 37.7 करोड़ हो गई है (तालिका 2.1)। समग्र तौर पर भारत में शहरीकरण का स्तर 2001 में 27.9 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 31.2 प्रतिशत हो गया। इस तरह से 1991–2001 दशक में 2.2 प्रतिशत वृद्धि दर की तुलना में 2001–2011 दशक के दौरान 3.3 प्रतिशत की वृद्धि दर रही। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि 1990 के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में लगभग 6 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई जबकि इक्कीसवीं सदी के पहले दशक के दौरान लगभग 8 प्रतिशत की दर से (अहलूवालिया, 2011, पृ. 85–105)। 2001–2011 के दौरान तेजी से शहरीकरण के पीछे आर्थिक वृद्धि की ताकत को यह आंकड़ा स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित करता है।

तालिका 2.1: भारत में शहरीकरण की प्रवृत्ति (1961 -2011)

जनगणना का वर्ष	शहरी जनसंख्या (मिलियन में)	शहरी जनसंख्या का कुल जनसंख्या में हिस्सा (%)	घातांकी वार्षिक शहरी वृद्धि दर (%)
1961	78.94	17.97	-
1971	109.11	19.91	3.23
1981	159.46	23.34	3.79
1991	217.18	25.72	3.09
2001	286.12	27.86	2.75
2011	377.10	31.16	2.76

स्रोतः भारत की जनगणना, विभिन्न वर्षों में।

तालिका 2.2: शहरी-ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि अंतर (1971 -2011)

दशक	ग्रामीण	शहरी	शहरी-ग्रामीण वृद्धि अंतर (घातांकी वार्षिक वृद्धि दर (%)
1971-81	1.76	3.79	2.03
1981-91	1.80	3.09	1.29
1991-2001	1.69	2.75	1.06
2001-2011	1.15	2.76	1.61

स्रोतः भारत की जनगणना, विभिन्न वर्षों में।

इस बात पर ध्यान देना उपयुक्त होगा कि शहरी जनसंख्या में वृद्धि अकेले शहरीकरण को तीव्र नहीं कर सकती। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि यदि शहरीकरण की परिघटना घटती है तो शहरी जनसंख्या का वृद्धि दर ग्रामीण जनसंख्या की वृद्धि दर से अधिक होती है। इस प्रकार शहरी-ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि में अंतर ही शहरीकरण की प्रक्रिया हेतु महत्वपूर्ण है। तालिका 2.2 स्पष्टतः दिखलाती है कि शहरी-ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि अंतर 1991–2001 में 1.1 प्रतिशत प्रतिवर्ष से बढ़कर 2001–2011 के दौरान 1.6 प्रतिशत प्रति वर्ष हो गयी था। तालिका 2.2 से यह भी प्रकट होता है कि 2001–2011 के दौरान ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि में पहले की अवधियों की अपेक्षा तेजी से कमी आई।

बॉक्स सं. 2.2

इस बात पर विचार करना पड़ेगा कि शहरी-ग्रामीण जनसंख्या वृद्धि अंतर दरअसल ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के प्राकृतिक वृद्धियों के अंतर (जन्म-मृत्यु), निवल ग्रामीण वर्गीकरण और निवल ग्रामीण से शहरी प्रवसन का उत्पाद है।

शहरी-ग्रामीण प्राकृतिक वृद्धि अंतर जनगणना अवधियों 1991–2001 और 2001–11 के बीच लगभग स्थिर बना रहा है (प्रति 1000 की जनसंख्या पर चार व्यक्ति)। इसलिए यह निवल ग्रामीण-शहरी वर्गीकरण और निवल ग्रामीण से शहरी प्रवसन है जो उच्च शहरी-ग्रामीण वृद्धि अंतरों के लिए और परिणामतः 2001-2011 के दौरान शहरीकरण को गति प्रदान करने के लिए जिम्मेदार हैं।

अगले अनुभाग में आप शहरीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले प्रवसन के कर्ष-विकर्ष बलों के संबंध में विभिन्न पहलुओं के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

2.4 शहरीकरण के मुद्दे

भारत में शहरी क्षेत्रों की जनसंख्या शहरी क्षेत्रों की ओर लोगों के प्रवसन के कारण, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों की कमी के कारण और कुछ अन्य कारणों से बढ़ रही है। और यही नहीं मेट्रोपॉलिटन शहरों की जनसंख्या अन्य दूसरे कस्बों, छोटे शहरों की अपेक्षा अधिक तेज गति से बढ़ रही है जिससे तमाम सामाजिक-पर्यावरणीय समस्याएं जुड़ती जा रही हैं।

यह भी अच्छी तरह से विदित है कि बढ़ता हुआ शहरीकरण और शहरों की वृद्धि आर्थिक विकास से बहुत घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है, जैसा कि इस पद के सबसे अद्यतन अर्थों से निर्णीत है। संयुक्त राष्ट्र (2008, पृ.1) के अनुसार, शहरी क्षेत्रों में अपेक्षित जनसंख्या वृद्धि का अधिकांश भाग कम विकसित क्षेत्रों के शहरों और कस्बों में संकेंद्रित होगा। किसी भी भौगोलिक क्षेत्र की बात हो, एशिया ही शहरी जनसंख्या में सबसे अधिक वृद्धि का अनुभव करेगा। इसकी शहरी जनसंख्या के बारे में अनुमान लगाया गया है कि यह 180 करोड़ (1.8 बिलियन) तक बढ़ जाएगा। यहां तक कि आने वाले दशक में बड़े शहरों की संख्या अच्छी खासी बढ़ जाएगी। परिणामस्वरूप मेगा शहरों (1 करोड़ या अधिक की जनसंख्या वाले) में और 50 लाख से 1 करोड़ तक की जनसंख्या वाले छोटे शहरों में विश्व जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि हो जाएगी। 2007 में पूरे विश्व में 19 मेगा शहर थे परन्तु अनुमान है कि 2025 तक इनकी संख्या 25 हो जाएगी; और इनमें से अधिकांश मेगा शहर एशिया में थे।

भारत शहर प्रतिस्पर्धात्मकता रिपोर्ट (सीसीआर), 2011 ने 50 शहरों का मूल्यांकन किया था। इसने शहरों का उनके वित्तीय, सामाजिक, व्यवसाय निष्पादन, तकनीकी, विदेशी कंपनियों की उपस्थिति आदि के समग्र निष्पादन के आधार पर आंकलन किया था। प्रमुख अंग्रेजी दैनिक द टाइम्स ऑफ इंडिया, आईएमआरबी (भारतीय बाजार अनुसंधान ब्यूरो) ने देश के आठ सबसे वृहद शहरी संकुलों में 'जीवन की गुणवत्ता सर्वेक्षण' नाम से एक मतगणना आयोजित की थी। इसमें चुने गए शहरों में ऐसे शहर थे जिनकी जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 50 लाख या अधिक थी। इसके निकले परिणाम निम्नवत हैं:

तालिका 2.3: जीवन की गुणवत्ता

आधार/स्कोर	अहमदाबाद	पुणे	दिल्ली	मुम्बई	बेंगालुरु	हैदराबाद	चेन्नई	कोलकाता
सामाजिक अवसंरचना	3.2	3.1	3.3	3.0	3.2	3.0	3.1	2.5
पर्यावरण	2.6	2.8	2.8	2.1	2.9	2.5	2.2	2.1
भौतिक एवं नागरिक अवसंरचना	3.4	3.0	2.7	3.3	2.6	2.8	2.5	2.4
आराम की सुविधाएं	3.0	3.1	3.1	3.5	2.9	3.0	3.0	3.0
सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य	3.2	3.1	2.6	3.1	3.0	3.2	2.9	3.1
जीवन की गुणवत्ता	2.7	2.7	2.2	2.2	2.4	2.7	2.3	2.3
अभिगमन की सुगमता	2.2	1.9	2.5	2.5	2.1	2.3	2.3	2.3

स्रोतः इकोनॉमिक टाइम्स (टाइम्स ऑफ इंडिया), दिसम्बर 11, 2011

आइए, हम चर्चा करते हैं कि उपरोक्त तालिका 1 से 5 तक के स्केल पर हमें क्या दर्शाती है:

- **सामाजिक अवसंरचना:** भारत के आठ सबसे बड़े शहर, सभी औसत या उससे थोड़ी बेकार रेटिंग में ही समाप्त हो गए और कुछ बिल्कुल स्पष्ट कारण हैं कि ऐसा क्यों है। शुरुआत के लिए, यही देखना सही होगा कि अभिगमन उन सभी में समस्या का एक क्षेत्र है। कुछ मामलों में यह इसलिए है कि सार्वजनिक परिवहन अवसंरचना अनुपस्थित है और दूसरों में इसलिए कि भारी ट्रैफिक और पार्किंग का संताप जीवन को नरक बना देता है।

- **पर्यावरण:** समस्या का दूसरा क्षेत्र 'पर्यावरण' की व्यापक श्रेणी है। हालाँकि मौसम के बारे में प्रशासक कुछ नहीं कर सकते, वायु की गुणवत्ता प्रत्येक शहर के लिए एक चिंता की तरह उभरी है और यही हाल खुली जगहों और खेलकूद की सुविधाओं का है। यह व्यापक श्रेणी यह निर्णय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि लोग अपने शहर में जीवन की गुणवत्ता को किस तरह देखते हैं।

- **भौतिक और नागरिक संरचना:** बिजली और पानी आपूर्ति के मामले में हालाँकि भौतिक संरचना को काफी मजबूत किया गया है, नागरिक अवसंरचना– जैसे कि कानून और व्यवस्था, दक्ष और साफ सुथरा स्थानीय प्रशासन हमारे नागरिकों का केवल सपना भर रह गया है।

- **जीवन की गुणवत्ता:** ऐसी अवधि में जबकि मुद्रास्फीति की उच्च दर बनी हुई थी, विशेष रूप से खाद्यान्नों में, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि जीवन की लागत एक ऐसा मानदण्ड है जिस पर हर शहर की रैंकिंग कम आई है। यह पूर्वानुमान गलत नहीं था कि हर शहर के निवासियों ने कहा कि उनके शहरों में जीवन आरामदायक की अपेक्षा तनावपूर्ण अधिक है। सिविक सेंस और बल्कि इसकी कमी को प्रत्येक शहर में एक समस्या की तरह माना गया है और उनमें से कोई भी 1 से 5 तक के स्केल में 2.5 से अधिक अंक नहीं प्राप्त कर सका।

- **आराम की सुविधाएं:** कुछ लचीले परिदृश्यों पर जवाब देने वालों से अच्छा स्कोर मिला है। उदाहरण के लिए, आराम की सुविधाओं के मामले में हर शहर को लगभग समान रूप से 'औसत' और 'अच्छा' के बीच का स्कोर मिला है, फिर भी रात्रि भ्रमण या रात की ज़िन्दगी एक अपेक्षा ही थी। 'सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्य' एक और श्रेणी थी जहां जवाब देने वालों ने अपने शहरों को अपेक्षाकृत अच्छी रेटिंग दी है, राष्ट्रीय राजधानी हालाँकि इस नियम का एकमात्र अपवाद रहा।

- **सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्य:** चेतावनी या विरोध यहां मान्य है। यह मत उन लोगों तक सीमित था जो सामाजिक-आर्थिक श्रेणियों में सबसे उच्च स्तर पर थे और उनके लिए जो 60 साल की आयु तक थे। आख्यान संबंधी सभी साक्ष्य यह प्रस्थापना करते हैं कि हमारे शहर बुजुर्ग लोगों और आर्थिक रूप से सबसे निचले पायदान पर रह रहे लोगों के लिए विशेष रूप से सख्त और कठिन हैं।

प्राकृतिक जनसंख्या वृद्धि, निवल ग्रामीण-शहरी वर्गीकरण और ग्रामीण से शहर की ओर प्रवसन शहरी जनसंख्या वृद्धि के घटक हैं। शहरी जनसंख्या वृद्धि की गतिकी को समझने के लिए उनके सापेक्षिक योगदान का आंकलन बहुत महत्वपूर्ण है। यह दिखलाता है कि निवल ग्रामीण-शहरी वर्गीकरण और ग्रामीण से शहरी प्रवसन का योगदान 1991–2001 में 42 से बढ़कर 2001–2011 में 56 प्रतिशत तक पहुंच गया। इस क्षण उपलब्ध 2011 की

जनगणना के आंकड़े अभी इन दो कारकों को अलग करने की इजाजत नहीं देते परन्तु यह जरूर दिखलाते हैं कि 2011 में बड़ी संख्या में नए शहरों का उदय हुआ है। राष्ट्रीय स्तर पर शहरों की संख्या 5,161 से बढ़कर 7,935 हो गयी जिसका अर्थ है 2001 की जनगणना की तुलना में 2011 में 2,774 नए शहर (2,532 जनगणना नगर और 242 वैधानिक नगर) जुड़ गए हैं।

चूंकि 2001 और 2011 की जनगणनाओं के बीच 'शहरी' की परिभाषा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, इसने तेजी से होते शहरीकरण में महत्वपूर्ण रूप से योगदान दिया है इसके बावजूद कि इसी दौरान कई मेट्रोपॉलिटन शहर अपने वृद्धि दरों में तीव्र गिरावट दिखा रहे हैं (कुण्डु, 2011)। दूसरी ओर शहरी जनसंख्या वृद्धि में प्राकृतिक वृद्धि का योगदान 1981–91 के दौरान सर्वाधिक 62 प्रतिशत से घटकर 2001-2011 के दौरान 44 प्रतिशत रह गया है। फिर भी इस प्राकृतिक वृद्धि ने 4 करोड़ के लगभग भारी जनसंख्या को 2001-2011 के दौरान शहरी क्षेत्रों में जोड़ा है। भारत के शहरीकरण के अध्ययन में, प्राकृतिक वृद्धियों ने उतना ध्यान आकर्षित नहीं किया है जितना कि ग्रामीण से शहरी प्रवसन ने। इससे यह लोकप्रिय विश्वास बनता गया है कि शहरी जनसंख्या केवल प्रवसन के चलते बढ़ रही है।

2.5 शहरीकरण और प्रवसन

भारत में शहरीकरण की समस्याओं पर पहली बार विचारणीय रूप से विस्तृत चर्चा बर्कले (कैलिफ़ोर्निया) में 1960 में आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार में हुई थी। इस सेमिनार का भारत में शहरीकरण के अध्ययन में बहुत बड़ा योगदान यह रहा कि इसी के बाद 1962 में एक पुस्तक प्रकाशित हुई।

1961 की जनगणना के परिणाम दिखलाते थे कि 1951 से शहरीकरण बहुत तीव्र गति से नहीं हुआ। और दो भयंकर ताकतें भारत में उन्मुक्त कर दी गईं:

- जनसंख्या वृद्धि की अपेक्षाकृत तीव्र दर और
- शहरीकरण की बढ़ती हुई तेज दर।

1951–61 के दशक के लिए जनसंख्या वृद्धि की जो दर प्रकट हुई वह अनपेक्षित रूप से बहुत ऊँची 21.5 प्रतिशत थी। दूसरी ओर शहरी जनसंख्या के बारे में सारे अनुमान बहुत ही अधिक आंकने वाले साबित हुए। 1961 की जनगणना से शहरी वृद्धि की बहुत ही कम दर पता चली जो 1951–61 के दशक के लिए मात्र 26.4 प्रतिशत थी।

शहरी जनसंख्या का कुल जनसंख्या से अनुपात कच्छप गति से बढ़ता हुआ 1951 में 17.3 प्रतिशत से बढ़कर 1961 में सिर्फ 18.0 प्रतिशत (यदि नई परिभाषा के अनुसार समायोजन कर दिया जाता तो 19 प्रतिशत) तक पहुंच सका। इस प्रकार 1951–61 दशक के दौरान शहरीकरण स्तब्धकारी या भयंकर नहीं था। (मेहता, 1962)।

यह दर्ज करना बहुत आश्चर्यजनक है कि ग्रामीण-शहरी प्रवसन में लगभग 37 प्रतिशत की कमी उस समय आई जबकि देश ने दो पंचवर्षीय योजनाएं सफलतापूर्वक पूरी कर ली थीं और साथ ही साथ सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों का साक्षी बना था।

शहरीकरण के संदर्भ में 1961 की जनगणना का विश्लेषण स्पष्ट करता है कि शहरीकरण का विषय और स्वरूप भी परिवर्तित तथा परिवर्धित हुए। शहर से शहर में प्रवास, विशेष रूप से छोटे कस्बों से बड़े शहरों की ओर प्रवास वर्धक तौर पर महत्वपूर्ण रहा। यह एक दूसरा कारक था कि ग्रामीण से शहरी प्रवसन की रफ्तार कम होती गई।

बॉक्स सं. 2.3

यह संभव है कि लोग ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर धकेले जाएं और उनमें से बहुत लोगों को पुनः वापस शहरी क्षेत्रों से ग्रामीण क्षेत्रों की ओर या फिर दूसरे शहरी क्षेत्रों की ओर धकेल दिया जाए। 'धक्का' हमेशा कोई बहुत साफ-सुथरा एक दिशीय प्रवाह वाली कार्यवाही नहीं होती। यह आगे या पीछे या किसी और दिशा में भी हो सकता है।

भारत के कई क्षेत्रों में विकास योजनाओं, शिक्षा के प्रसार, औद्योगीकरण, सुधरी हुई परिवहन और संचार व्यवस्था इत्यादि के चलते हाल के वर्षों में प्रवसन की गति बढ़ी हुई हो सकती है। परन्तु इस बात पर तर्क दिया जाता है कि बड़े पैमाने पर उल्टा या विपरीत प्रवसन तीव्र जनसंख्या वृद्धि की स्थितियों के अधीन धीमी आर्थिक वृद्धि का पहचान है। ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में रोजगार के पर्याप्त अवसरों की कमी ने अनैच्छिक गतिशीलता की स्थितियां पैदा की हैं जिससे उल्टा या विपरीत प्रवसन भी हुआ है।

प्रवसन की प्रवृत्तियां और अनुमान

औपनिवेशिक अवधि के दौरान भारतीय लोगों का वर्णन उच्च रूप से गतिहीन जनसंख्या की तरह किया जाता था। शिक्षा का निम्न स्तर, प्रवसन से जुड़ी हुई अनिश्चितता का सामना करने की कमतर क्षमता, बेकार परिवहन और संचार सुविधाएं, परम्परागत मूल्य प्रणाली और अन्य सामाजिक कारकों को प्रायः भारतीयों के प्रवसन की निम्न दर के कारण की तरह माना जाता है। **किंग्सले डेविस** ने अपने पथप्रदर्शक कार्य ''द पॉपुलेशन ऑफ इंडिया एंड पाकिस्तान'' में इस गतिहीनता के लिए जाति प्रथा की व्यापकता, संयुक्त परिवार व्यवस्था, कम उम्र में विवाह की प्रथा, भाषा और संस्कृति की विविधता, शिक्षा की कमी और अर्थव्यवस्था में कृषि की प्रधानता आदि कारणों को जिम्मेदार ठहराया है। उन्होंने तर्क दिया है कि जाति और परिवार प्रणाली और परम्परागत मूल्यों से बंधा हुआ एक समाज प्रायः प्रवसन के लिए निवारक या हतोत्साहित करने वाले की तरह काम करता है (मेहता में उद्धृत, 1962)।

हालाँकि बहुत से ऐसे जनसांख्यिकीविद हैं जो देश में सामाजिक-सांस्कृतिक विविधता होने के बावजूद प्रवसन की इस दर को बहुत कम नहीं मानते हैं। व्यापक तौर पर यह महिलाओं में प्रवसन की उच्च दर के कारण है। वास्तव में देश के भीतर प्रवसन धाराओं में महिलाएँ अधिक प्रभावशाली रही हैं क्योंकि उनका विवाह हमेशा या अधिकांशतः गांव के बाहर होता था और महिलाएँ विवाह के पश्चात पति या उसके परिवार में ही जाकर रहती थीं। यहां तक कि प्राकृतिक आपदाओं जैसे कि अकाल के चलते पुरुषों में भी प्रवसन अपेक्षाकृत उच्च था, जिसने हजारों लोगों को भरण-पोषण की खोज में ग्राम्य प्रणाली से बाहर शहरों, कस्बों या अच्छे ग्रामीण क्षेत्रों की ओर खदेड़ दिया।

डेविस के तर्क द्वारा, कोई भी तर्क करेगा कि शिक्षा के स्तर, परिवहन और संचार सुविधाओं में सुधारों से, कृषि से उद्योगों की ओर कार्यबल के स्थानान्तरण से और तृतीयक क्षेत्र की बढ़ती गतिविधियों ने स्वातंत्र्योत्तर अवधि में गतिशीलता में वृद्धि की है। हालाँकि मजे की बात यह है कि भारत में जनसंख्या गतिशीलता की प्रवृत्तियों का विश्लेषण स्पष्ट करता है कि शिक्षा और संचार सुविधाओं में महत्वपूर्ण सुधारों, अर्थव्यवस्था के विविधीकरण और आदर्शों और मूल्यों में आधुनिकीकरण के बावजूद कम से कम 1960 के दशक के बाद से जनसंख्या की गतिशीलता में कमी आई है।

प्रवसन का ऐतिहासिक परिदृश्य प्रस्तुत करने के लिए, 1961–91 के दौरान आंतरिक प्रवसन का पैटर्न, पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए आजीवन के साथ-साथ दो जनगणनाओं के बीच के आंकड़े तालिका 2.3 में प्रस्तुत किए गए हैं। ये आंकड़े जनगणना स्रोतों से लिए गए हैं। इनसे उल्लिखित किया जा सकता है कि 1961–71 के दौरान निरपेक्ष प्रवसनों की संख्या में कमी आई थी। जनगणना प्रकाशनों ने इस कमी के लिए प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिए आरम्भ किए गए सकारात्मक उपायों, खाद्यान्न और अन्य आवश्यकताओं के लिए बेहतर वितरण प्रणाली और शैक्षिक और स्वास्थ्य सुविधाओं की बेहतर व्यापकता को जिम्मेदार बताया है। यह बात का पता लगाने के लिए कि क्या 1960 के दशकों में आर्थिक विषमता में कमी आई थी और आधारभूत सुविधाओं का वितरण अधिक संतुलित हुआ था, कोई भी गम्भीर अध्ययन नहीं कराया गया था। वास्तव में, जब विभिन्न सामाजिक-आर्थिक आयामों में असमानता में वृद्धि का अवलोकन किया जाता है तो उपरोक्त निष्कर्षों को गम्भीरतापूर्वक प्रश्नगत किया जा सकता है, जो आंशिक रूप से हरित क्रांति के पहले दौर से जुड़ा था।

प्रवासी जनसंख्या की वृद्धि दर में 1971–81 के दौरान बहुत सीमांत रूप से बढ़ोत्तरी शुरू हुई थी जो प्रवासियों की प्रतिशतता में मामूली सुधार के रूप में प्रकट हुई। लेकिन यह वृद्धि महिला प्रवासियों की वृद्धि के कारण हुई थी जिसके लिए सामाजिक-सांस्कृतिक कारक जिम्मेदार थे। जहां तक पुरुषों का सवाल था, प्रवासियों की वृद्धि दर ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में जनसंख्या की वृद्धि दर से कम थी, जिसके परिणामस्वरूप 1961-91 के दौरान प्रतिशतता के आंकड़ों में लगातार गिरावट होती रही। महत्वपूर्ण रूप से, चूंकि महिला प्रवसन का बड़ा हिस्सा विवाह और अन्य सामाजिक कारकों के कारण था, इसलिए आर्थिक कारणों से श्रमिकों की गतिशीलता पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए सिर्फ पुरुष प्रवसन के पैटर्न पर ध्यान देना ही उचित होगा।

तालिका 2.3: भारत में आंतरिक प्रवसन का स्वरूप (1961-91)

श्रेणियां	प्रवासियों की संख्या(मिलियन में)				वृद्धि दरें (प्रतिशत में)		
	1961	1971	1981	1991	1961–71	1971–81	1981–91
कुल जनसंख्या	439.20	548.20	683.30	846.30	24.80	24.70	23.90
कुल प्रवासी							
अ. दो जनगणनाओं के मध्य	66.00 (15.00)	68.20 (12.40)	81.00 (12.30)	80.90 (9.70)	3.20	18.80	00
अ1. दो जनगणनाओं के मध्य अन्तर राज्यीय	8.70 (2.00)	8.50 (1.60)	10.90 (1.60)	11.10 (1.30)	.2.10	27.40	2.00
ब. पूरे जीवनकाल	134.60 (30.60)	157.40 (28.70)	195.80 (29.40)	222.60 (26.50)	16.90	24.40	13.70
ब1. पूरे जीवनकाल अन्तर राज्यीय	14.50 (3.30)	18.60 (3.40)	24.00 (3.60)	27.30 (3.30)	28.30	28.90	13.70
पुरुष जनसंख्या	226.30	284.0	353.30	439.20	25.50	24.40	24.60
पुरुष प्रवासी							
अ. अंतर जनगणनीय	25.60 (11.30)	26.80 (9.40)	30.40 (8.90)	26.70 (6.10)	4.70	13.70	12.30

अ1. अंतर जनगणनीय अंतर राज्यीय	5.10 (2.20)	5.10 (1.80)	5.50 (1.60)	5.20 (1.20)	1.50	7.60	.5.20
ब. जीवनकाल	41.50 (18.30)	48.80 (17.20)	57.20 (16.60(	60.00 (13.80)	17.60	17.10	5.00
ब1. जीवनकाल अंतर राज्यीय	7.80 (3.40)	9.60 (3.40)	11.50 (3.30)	12.20 (2.80)	22.90	19.90	5.80
महिला जनसंख्या	212.9	264.10	330.00	407.10	24.00	24.90	23.40
महिला प्रवासी							
अ. अंतर जनगणनीय	40.50 (19.00)	41.40 (15.70)	50.50 (15.70)	54.30 (13.50)	2.30	22.00	7.40
अ1. अंतर जनगणनीय अंतर राज्यीय	3.70 (1.70)	3.40 (1.30)	5.30 (1.70)	5.90 (1.50)	.7.00	57.40	9.50
ब. जीवनकाल	93.10 (43.70)	108.60 (41.10)	138.60 (43.10)	162.60 (40.30)	16.60	27.70	17.30
ब1. जीवनकाल अंतर राज्यीय	6.70 (3.20)	9.00 (3.40)	12.50 (3.90)	15.10 (3.80)	34.50	38.50	20.90
ग्रामीण पुरुष जनसंख्या	186.10	225.30	268.50	324.40	21.00	19.20	20.80
ग्रामीण पुरुष जनसंख्या							
अ. अंतर जनगणनीय	15.40 (8.40)	15.90 (7.10)	16.30 (6.30)	13.40 (4.20)	3.50	2.30	−18.00
अ1. अंतर जनगणनीय अंतर राज्यीय	1.70 (0.90)	1.80 (0.80)	1.80 (0.70)	1.50 (0.50)	9.10	.3.00	−15.80
ब. जीवनकाल	25.40 (13.90)	29.10 (12.90)	30.00 (11.50)	30.40 (9.40)	14.40	3.10	1.10
ब1. जीवनकाल अंतर राज्यीय	2.50 (1.40)	3.00 (1.30)	3.10 (1.20)	3.00 (0.90)	18.90	3.00	−2.30
शहरी पुरुष जनसंख्या	42.80	58.70	84.90	114.90	37.30	44.50	35.40
शहरी पुरुष जनसंख्या							
अ. अंतर जनगणनीय	10.20 (23.80)	10.80 (18.50)	14.10 (16.90)	13.30 (11.70)	6.40	30.50	−5.90
अ1. अंतर जनगणनीय अंतर राज्यीय	3.40 (7.90)	3.30 (5.60)	3.70 (4.40)	3.70 (3.30)	.2.40	13.20	0.20
ब. जीवनकाल	16.10 (37.50)	19.70 (33.60)	27.10 (32.40)	29.60 (26.00)	22.70	37.70	9.20
ब1. जीवनकाल अंतर राज्यीय	5.30 (12.30)	6.60 (11.20)	8.40 (10.00)	9.10 (8.00)	24.80	27.60	8.70

स्रोतः वर्ष 1961 के लिए डी-।।। तालिका और 1971, 1981 और 1991 की जनगणनाओं की डी-।। तालिका।

पिछले दो अनुभागों की अपनी समझ का आंकलन करने के लिए निम्न अभ्यास को कीजिए।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) 'शहरीकरण' को परिभाषित कीजिए। भारत में इसकी प्रक्रिया क्या है?

2) शहरीकरण के प्रमुख मुद्दे क्या हैं?

3) क्या आप सोचते हैं कि प्रवसन और शहरीकरण परस्पर संबंधित परिघटनाएं हैं?

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

आइए, प्रवसन के कारणों पर दृष्टिपात करें।

2.6 प्रवसन के कारण

पहली बार, 1981 की जनगणना ने प्रवसन के कारणों पर आंकड़े इकट्ठा करने का प्रयास किया जिसे मोटे तौर पर रोजगार, शिक्षा, विवाह, परिवार के प्रवास के चलते और अन्य कारणों में वर्गीकृत किया गया था। ये आंकड़े सिर्फ पिछले निवास से हटने को लेकर उपलब्ध थे। कारणों के आधार पर प्रत्येक प्रवसन धारा का प्रतिशत वितरण तालिका 2.4 में दिया गया है। तालिका से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पुरुष अधिकांशतया रोजगार (32.0 प्रतिशत) के कारण प्रवसित हुए और महिलाएँ सर्वाधिक विवाह (73.4 प्रतिशत) के कारण। लगभग 30 प्रतिशत पुरुष अपने परिवारों की गतिशीलता के साथ-साथ प्रवसित हुए और 29.1 प्रतिशत पुरुष अन्य कारणों से। जबकि 2 प्रतिशत से भी कम महिलाएँ रोजगार के चलते प्रवसित हुईं और मात्र 0.9 प्रतिशत महिलाएँ शिक्षा के लिए। दूरी और मूलस्थान/गंतव्य के आधार पर भी प्रवसन के कारणों में अंतर रहा। पुरुषों के लिए जो लोग रोजगार के लिए स्थानांतरित प्रवासियों का अनुपात दूरी बढ़ने के साथ बढ़ता है। छोटी दूरियों के प्रवास में:

तालिका 2.4: प्रवास के कारणों द्वारा प्रवासियों का वितरण, भारत, 1981

प्रवास के प्रकार	पुरुषों के प्रवास के कारण (%)					महिलाओं के प्रवास के कारण (%)				
	रोजगार	शिक्षा	परिवार गमन	विवाह	अन्य	रोजगार	शिक्षा	परिवार गमन	विवाह	अन्य
अन्तःजनपदीय										
ग्रामीण–ग्रामीण	15.9	4.7	33.5	6.3	39.6	0.8	0.4	7.6	82.8	8.4
ग्रामीण–शहरी	35.4	11.5	27.6	1.8	23.7	3.5	2.8	24.6	57.0	12.1
शहरी–ग्रामीण	21.8	3.3	32.1	2.7	40.1	2.6	0.9	18.3	61.7	16.5
शहरी–शहरी	31.0	4.7	35.8	1.4	27.1	3.8	1.9	32.8	45.5	16.0
योग	21.7	6.0	32.4	4.7	35.2	1.3	0.7	10.5	78.2	9.3
अन्तर–जनपदीय										
ग्रामीण–ग्रामीण	25.7	4.0	35.1	4.2	31.0	1.7	0.5	10.5	79.6	7.7
ग्रामीण–शहरी	50.4	8.2	22.5	1.0	19.9	4.7	2.6	31.3	49.2	12.2
शहरी–ग्रामीण	28.9	4.2	31.6	2.1	33.2	3.6	1.3	22.6	58.2	14.3
शहरी–शहरी	40.2	6.0	31.9	0.9	21.0	4.5	2.4	35.2	44.1	13.8
योग	37.9	5.9	29.9	2.1	24.2	2.9	1.2	19.4	66.4	10.1
अन्तर–राज्यीय										
ग्रामीण–ग्रामीण	37.8	2.1	31.3	2.8	26.0	3.7	0.5	15.5	71.5	8.8
ग्रामीण–शहरी	61.4	4.0	18.0	0.6	16.0	5.6	2.0	37.3	42.0	13.1
शहरी–ग्रामीण	33.3	2.9	28.7	1.4	33.7	4.8	1.6	27.9	50.4	15.3
शहरी–शहरी	48.9	4.8	26.8	0.8	18.7	5.0	2.4	37.9	41.2	13.5
योग	50.5	3.8	24.3	1.1	20.3	4.7	1.5	28.4	53.6	11.8
कुल										
ग्रामीण–ग्रामीण	19.7	4.3	33.7	5.6	36.7	1.1	0.4	8.5	81.7	8.3
ग्रामीण–शहरी	27.6	8.3	23.3	1.2	19.6	4.3	2.6	29.00	51.9	12.2
शहरी–ग्रामीण	28.3	3.5	31.3	2.3	36.6	3.2	1.1	20.9	59.1	15.7
शहरी–शहरी	40.8	5.3	31.2	1.0	21.7	4.4	2.3	35.3	43.7	14.3
योग	32.0	5.6	30.1	3.2	29.1	1.9	0.9	14.1	73.4	9.7

स्रोतः भारत की जनगणना, 1981, श्रृंखला–1, भाग पांच–ए, और बी (।।), प्रवसन तालिका डी–3, महापंजीयक एवं जनगणना आयुक्त।

- केवल 21.7 प्रतिशत रोजगार उद्देश्यों से था;
- मध्यम दूरी या अन्तर जिला प्रवासियों के लिए वही प्रतिशतता 37.9 प्रतिशत थी;
- लंबी दूरी के प्रवासों में यही प्रतिशतता लगभग 51 प्रतिशत रही।

जब प्रवास की दूरी निश्चित होती है तो रोजगार के उद्देश्यों से ग्रामीण से शहरी और शहरी से शहरी प्रवास धाराओं का अनुपात अन्य प्रवासी धाराओं की तुलना में अधिक होता है।

- ग्रामीण से शहरी आवाजाहियों का 61 प्रतिशत से अधिक और
- शहरी से शहरी क्षेत्र में रोजगार हेतु अन्तरराज्यीय पुरुष प्रवास 48.9 प्रतिशत रहा।

महिलाओं के मामले में, सर्वाधिक प्रतिशतता (82.8 प्रतिशत विवाह के कारणों से) ग्रामीण क्षेत्रों के बीच छोटी दूरियों के प्रवासों में देखा गया। जब प्रवासियों की संख्या का विश्लेषण ग्रामीण/शहरी और मूलस्थान/गंतव्य के आधार पर किया गया तो अधिकांश पुरुष, जो रोजगार के उद्देश्यों से प्रवसित हुए थे, अन्तरराज्यीय प्रवासी थे। **कुल मिलाकर, महिलाओं के लिए विवाह और पुरुषों के लिए रोजगार और परिवार का प्रवास भारत में जनसंख्या प्रवसन के सबसे बड़े कारण हैं।**

भूतकाल की प्रवृत्तियों को देखते हुए 2007-08 में ग्रामीण महिला प्रवासियों का हिस्सा बहुत उच्च स्तर 47.1 प्रतिशत पर रहा उनके साथी पुरुषों के तुच्छ हिस्से 5.4 प्रतिशत की तुलना में। उसी अवधि के दौरान शहरी महिला प्रवासियों का हिस्सा 45.6 प्रतिशत रहा जबकि उनकी तुलना में पुरुषों का मात्र 25.9 प्रतिशत। 2007-08 में ग्रामीण महिला प्रवासियों का 60.8 प्रतिशत हिस्सा विवाह के चलते और उसके पश्चात 29.4 प्रतिशत उनके माता-पिता/अर्जक सदस्य के गमन के चलते हुआ। उसी अवधि के दौरान 55.7 प्रतिशत पुरुष प्रवासी रोजगार के कारणों से और उसके पश्चात 25.2 प्रतिशत माता पिता/अर्जक के गमन के चलते प्रवासी हुए।

2.7 प्रवसन के प्रभाव

ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर प्रवसन, औद्योगीकरण, तकनीकी प्रगति और अन्य सांस्कृतिक परिवर्तनों से नजदीकी क्रियात्मक संबंध रखता है जो विश्व के लगभग सभी भागों में आधुनिक समाज के विकास की विशेषता रही है। प्रवसन सिर्फ शहरों की तरफ आकर्षण या गांवों से विकर्षण के कारण नहीं हुआ है बल्कि यह कई अन्य कारकों की मिलीजुली अन्तर्क्रिया है। जब ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती हुई जनसंख्या शहरों की ओर फैलने लगी तो आने वाली यह अत्यधिक जनसंख्या इतने बड़े पैमाने पर विसरित हुई कि शहर उसे अपने में समाहित न कर सके। चूंकि गांवों से आने वाले कामगार लोगों का एक विचारणीय हिस्सा आधुनिक विनिर्माण द्वारा उठाई गई मांगों को पूरा करने में असमर्थ था क्योंकि उनके पास उतनी कुशलता नहीं थी और न उतना अनुभव। इसके अतिरिक्त नगरीय क्षेत्र और गांवों के बीच सामाजिक-सांस्कृतिक अंतर के कारण प्रवासियों के लिए शहरी वातावरण से अनुकूलन करने में बहुत कठिनाई हुई; शहर के प्रभाव का साधारणीकरण करके केवल शहर के आकर्षण और इसी तरह गांव के प्रभाव के विकर्षण तक सीमित नहीं कर सकते।

अब हम कुछ महत्वपूर्ण कारकों के बारे में पढ़ते हैं जो ग्रामीण से शहरी स्थितियों की ओर प्रवास को शासित करते हैं।

1) आर्थिक कारकः

अ) गांवों की तुलना में बढ़ते हुए शहरों में रोजगार अवसरों का विस्तृत होना

ब) ग्राम-शहर मजदूरी में अंतर और आय वितरण

स) संपत्ति को प्रशंसात्मक दृष्टि से देखना

द) शहरों में बेहतर जीवन स्थितियां

2) सामाजिक कारकः

अ) पेशागत अवसर

ब) शैक्षणिक संभावना

स) जाति

3) व्यक्तिगत कारकः

अ) लिंग

ब) उम्र

स) निवास का स्थान

विद्रोहों या संघर्षों वाले स्थानों पर लोगों की सुरक्षा को भी प्रवास के एक महत्वपूर्ण कारक के तौर पर देखा गया है। अब हम पढ़ते हैं कि प्रवसन के प्रभाव क्या होते हैं।

प्रथम सर्वप्रमुख प्रभाव है **असमान क्षेत्रीय विकास**। शहरीकरण और औद्योगीकरण के लिए सुविधाओं का सृजन करने में अधिकांश संसाधन समाप्त हो जाते हैं जिससे कि देश के अन्य हिस्सों को अन्तहीन रूप से अधिकारियों से कुछ अनुग्रह और विशेषाधिकार की अपेक्षा करते हुए छोड़ देते हैं। इसलिए अनुग्रहीत और गैर-अनुग्रहीत क्षेत्रों के बीच संघर्ष उठ खड़ा होता है।

दूसरा प्रभाव शहरी क्षेत्रों का भौगोलिक अस्तित्व की तरह सृजन करने से संबंधित है। इससे दो प्रकार का निर्मूलन घटित होता है। पहला तो यह कि कुछ लोग अपने परम्परागत ग्रामीण स्थितियों से उखाड़ दिए जाते हैं जिससे कि वे शहरी क्षेत्रों में पुनः बस सकें और दूसरा यह कि शहरों के मूल निवासी भी उखाड़ दिए जाते हैं और उन्हें नए स्थानों पर बसने को मजबूर किया जाता है। विकास में क्षेत्रीय विषमता के कारण यह समस्या सर्वाधिक प्रासंगिक बन जाती है। ऐसे क्षेत्र जहां सुविधाएं सृजित की जाती हैं देश के दूसरे भागों से जनसंख्या के अविरल प्रवाह को आकर्षित करते हैं। इसलिए शहरी परिवृत्त का भौगोलिक क्षेत्रफल अनन्त तक बढ़ता चला जाता है जिससे अधिक गहन सामाजिक तनावों का उदय होता है। भारत में यह सभी औद्योगीकृत शहरी क्षेत्रों का सामान्य अनुभव है।

ग्रामीण जनसंख्या के शहरों में भारी संख्या में अन्तःप्रवाह का एक महत्वपूर्ण प्रभाव **आवास समस्या** का तीव्रता से गुरुतर हो जाना है, विशेष रूप से विकासशील देशों में। इसका परिणाम बड़े शहरों में सामान्य पारिस्थितिकीय संतुलन में विकृति होता है, जहां 30–50 प्रतिशत जनसंख्या जीर्ण-शीर्ण मकानों/झोपड़ियों में रहती है।

इन झुग्गी-झोपड़ी वालों के लिए **प्रवसन, स्वास्थ्य, पोषण और यहां तक कि शिक्षा** की समस्या का कारण बनता है और उन्हें दुखमय जीवन व्यतीत करना पड़ता है। यह शहरों में रहने वाले लोगों के लिए शारीरिक एवं अन्य समस्याओं का कारण बनता है क्योंकि जनसंख्या का प्रवाह असंगत और अव्यवस्थित होता है।

शहरों में असंगत प्रवाह के साथ, स्वच्छता की समस्या इत्यादि बहुत भयंकर रूप से बढ़ती है और प्रदूषण बढ़ता है। यह उपयोगिताओं और परिवहन इत्यादि पर बोझ बढ़ाता है

जिसके लिए शहर का नियोजन भी नहीं किया गया होगा। लोगों का भारी प्रवाह इन क्षेत्रों में अस्थायी बेरोजगारी पैदा करता है और शहरों में सभी प्रकार के भ्रष्टाचार का उदय होता है।

ग्रामीण जनसंख्या के तेज अन्तःप्रवाह को समायोजित करने के लिए शहरों के आसपास बहुत सारी कृषि योग्य उपजाऊ भूमियों का अधिग्रहण किसानों से बहुत कम लागत पर किया जाता है। जब लोग अपनी भूमियों के बदले मुआवजा पाते हैं तो वे शहरी जीवन अंगीकार करने की कोशिश करते हैं और अपना धन विलासिता में खर्च कर देते हैं। वे अपनी परम्परागत खेती करने में असमर्थ हो जाते हैं और धीरे-धीरे आर्थिक रूप से असुरक्षित बन जाते हैं। जब उनके पास आय का कोई नियमित साधन नहीं होता तो आसानी से धन कमाने के लिए वे गैरकानूनी गतिविधियों तक में लग जाते हैं।

अधिकांशतया शहरीकरण दीर्घावधि योजनाओं के आधार पर नहीं होता और प्रवाह के दर के अनुसार होता रहता है, जो कभी-कभार आकस्मिक भी होता है। इसलिए सबसे अच्छी उत्पादक भूमियों का अधिग्रहण ऊँची-ऊँची इमारतें खड़ी करने के लिए किया जाता है। एक तरफ तो यह देश में खेतिहर उत्पादन को प्रभावित करता है और दूसरी ओर अच्छे किसानों को शहरों के लिए एक बोझ बनाकर विस्थापित करता है।

रोजगार अवसरों से आर्थिक लाभ के साथ, ग्रामीण शिल्पकार अपनी अच्छे कौशल के साथ शहरों की ओर चले जाते हैं परन्तु कई अपना व्यवसाय शहरों में जारी नहीं रख पाते। यह परम्परागत संस्कृति के साथ-साथ परम्परागत कुटीर उद्योग के लिए भी बड़े धक्के का कारण बनता है। यह आगे चलकर आर्थिक विषमता भी पैदा करता है।

प्रवासी लोग अधिकांशतः गांवों में अपने संबंधों को संजोकर रखते हैं और अक्सर गांव जाते हैं। उनका भव्य जीवन गांवों में मासूम जवान लड़कों और लड़कियों को आकर्षित करता है जो प्रवसन के लिए अवसरों की तलाश में लालायित हो जाते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

1) भारत में प्रवसन में क्या प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं?

2) प्रवसन के लिए कौन-कौन से कारक उत्तरदायी हैं?

3) प्रवसन के प्रभावों को सूचीबद्ध कीजिए।

निम्नलिखित अनुभाग में आप पढ़ेंगे कि प्रवसन महिलाओं को कैसे प्रभावित करता है।

2.8 महिलाएँ और प्रवसन

महिलाओं के बढ़ते प्रवसन के साथ, प्रवसन की प्रक्रिया के सिलसिले में तृतीय विश्व के देशों में जेंडर संबंधित मुद्दे बहुत महत्वपूर्ण होते जा रहे हैं। इन देशों में से कई में ग्रामीण से शहरी प्रवसन में महिलाएँ हावी हैं। कुछ अन्य देशों में ग्रामीण से शहरी प्रवसन धारा में उनका हिस्सा बहुत तेजी से बढ़ रहा है। यह अवलोकन किया गया है कि बढ़ते हुए शहरीकरण के साथ शहरों की ओर महिलाओं की प्रवासी धारा उल्लेखनीय ढंग से बढ़ रही है।

ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों की ओर होने वाले इस भौतिक गमन में वृद्धि के साथ महिलाओं के लिए नई भूमिकाएं, शहरों में रहने से संबंधित नई समस्याएं और महिलाओं की स्थिति में आमूल परिवर्तन के दृश्य सामने आ रहे हैं। हालाँकि, इन भूमिकाओं में प्रवेश का तात्पर्य ग्रामीण पृष्ठभूमि से आने वाली महिलाओं के लिए सिर्फ एक भिन्न स्थिति नहीं है बल्कि वह एक नए नीति परिदृश्य की मांग करती है जिसके महत्वपूर्ण आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और जनसांख्यिकीय आयाम हैं। (फॉसेट और अन्य, 1984)।

1981 की जनगणना तक, प्रवसन के आंकड़ों में कामकाजी स्थिति के साथ-साथ सभी कामगार प्रवासी महिलाओं की पेशेवर संरचना के बारे में आंकड़े इकट्ठा नहीं किए जाते हैं परन्तु ऐसे वर्तमान आंकड़े में केवल वही लोग शामिल किए गए हैं जिन्होंने अपने प्रवास के कारण में 'रोजगार' बताया है। ऐसे आंकड़े इन प्रवासी महिलाओं द्वारा निभाई जा रही आर्थिक भूमिकाओं की सच्ची तस्वीर को प्रदर्शित करने में असफल हैं परन्तु उनको हाशिए पर किए जाने के साथ-साथ इन महिलाओं में रोजगार की स्थिति के बारे में कुछ विचार दे सकते हैं। रोजगार के चलते प्रवसित होने वाली महिलाओं को जनगणना के समय 'मुख्य कामगार', 'सीमांत कामगार', 'गैर कामगार' और 'कार्य के लिए उपलब्ध' श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। यह पाया गया है कि सभी महानगरों में रोजगार से संबंधित प्रवासी पुरुषों के 85 प्रतिशत से अधिक 'मुख्य कामगार' की श्रेणी में थे।

यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रोजगार के कारण इन शहरों की ओर आने वाले अधिकांश पुरुष प्रवासी जबकि वैतनिक रोजगार में नियुक्त थे, वहीं ऐसी महिला प्रवासियों की बड़ी संख्या बेरोजगार रह गईं या छोटी अवधि के लिए सीमांत नियुक्ति पा सकी। ऐसी महिला प्रवासियों में गैर-कामकाजी महिलाओं के उच्च अनुपात का एक दूसरा संभावित कारण इस तथ्य के कारण हो सकता है कि उनमें से बड़ी संख्या बहुत कम उम्र में थी और अविवाहित थी। विवाहित हो जाने के बाद परिवार के उत्तरदायित्वों और बच्चों के पालन के चलते महिलाएँ स्वयं को श्रम बाजार से हटा लेती हैं।

1988 में शहरी मामलों के राष्ट्रीय संस्थान (एनआईयूए) द्वारा छः शहरों (बेंगालुरु, लखनऊ, विशाखापत्तनम, फरीदाबाद, त्रिचुर और पुरी) में कराए गए एक सर्वेक्षण में निम्न आय परिवारों, जिनमें से अधिकांशतः प्रवासी परिवार थे, में महिलाओं के लिए कार्यबल सहभागिता दर, बेंगालुरु और विशाखापत्तनम में बहुत ही उच्च 46.5 प्रतिशत तक था। 15 वर्ष से अधिक आयु समूह की महिलाओं के मामले में इन दोनों शहरों में कार्यबल सहभागिता दर क्रमशः 77.5 प्रतिशत और 59.8 प्रतिशत थी। इन निम्न आय परिवारों में इतनी उच्च कार्यबल सहभागिता दर, जैसा कि सूक्ष्मस्तरीय सर्वेक्षण में प्रकट हुआ, के दोनों कारण थे। एक तो यह कि परिवारों की गरीब स्थिति के कारण कार्य करने की अतीव आवश्यकता और दूसरे कार्य की ऐसी व्यापक परिभाषा ने जो, कार्यबल सहभागिता दरों में अदृश्यता के प्रभाव

को कम करते हुए, परम्परागत तौर पर 'कार्य' की परिभाषा में शामिल न किए गए व्यवसायों को भी रोजगार के तौर पर सम्मिलित कर लिया। संस्थान द्वारा छः शहरों में किए गए उस सर्वेक्षण ने यह भी दर्शाया कि सर्वे में शामिल किए गए निम्न आय के परिवारों में 62 प्रतिशत परिवारों में कम से कम एक महिला कामगार थी। बेंगालुरु में लगभग प्रत्येक निम्न आय परिवार (93.2 प्रतिशत) में एक कामगार महिला थी (एनआईयूए, 1988)।

शहरी मामलों के राष्ट्रीय संस्थान द्वारा कराए गए अध्ययन ने यह भी प्रकट किया कि निम्न आय परिवारों में 32 प्रतिशत से अधिक कामगार महिलाओं ने परिवार की आय में कुल आय के 26 से 50 प्रतिशत तक योगदान किया। यह आंकलित किया गया कि झुग्गी झोपड़ियों में निम्न आय परिवारों के मामले में परिवार के आय के हिस्से के रूप में महिलाओं का अर्जन काफी महत्वपूर्ण होता है और यदि इसे परिवार की आय से निकाल दिया जाए तो निम्न आय परिवारों में से कम से कम 23 प्रतिशत परिवार गरीबी की गहन अवस्था में डूब जाएंगे (एनआईयूए, 1988, पृष्ठ 28)। गरीब महिलाओं का अपने परिवार की आय में न केवल परिमाणात्मक योगदान बड़े महत्व का होता है बल्कि गुणात्मक योगदान भी उनके परिवारों के लिए अपरिमित रूप से मूल्यवान होता है। पुरुषों के विपरीत जो अपनी कमाई का एक हिस्सा स्वयं पर खर्च करते हैं, गरीब कामकाजी महिलाएँ अपनी सम्पूर्ण कमाई परिवार के सदस्यों के पालन-पोषण और बेहतरी के लिए खर्च करती हैं। (श्रमशक्ति, 1988, पृ. 24)।

भारत में महिलाओं की कार्यबल सहभागिता में महत्वपूर्ण उत्तर-दक्षिण के अंतर (अर्थात उत्तर भारत और दक्षिण भारत की परिस्थितियों का अंतर) पाए गए हैं। **बोसरप** ने उत्तर भारत में महिला कार्यबल सहभागिता के पैटर्न को पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीकी अरब देशों की महिलाओं से मिलता जुलता पाया जहां महिला कार्यबल सहभागिता दरें बहुत कम थीं। केन्द्रीय और दक्षिण भारत में, जहां मुस्लिम संस्कृति कभी उतनी गहराई तक प्रवेश नहीं कर सकी जितनी कि उत्तर में, महिला कार्यबल सहभागिता का पैटर्न दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों से मिलता जुलता रहा और महिला कार्यबल सहभागिता दरें भी अपेक्षाकृत ऊँची थी। मुस्लिमों की अधिक आबादी वाले शहरों और कुलीन संस्कृति ने बहुत निम्न महिला कार्यबल सहभागिता दरों को प्रदर्शित किया (राजू, 1981)। उत्तर प्रदेश से महिला प्रवासियों की कार्यबल सहभागिता दर तमिलनाडु के दक्षिणी राज्य की अपेक्षा बहुत ही कमतर रही। (सिंह, 1978)।

महिला प्रवासियों में कार्यबल सहभागिता और शिक्षा के बीच ऋणात्मक संबंध देखा गया है अर्थात जो सबसे कम पढ़ी लिखी थीं उनके कार्य करने की संभावना सबसे अधिक थी और इसलिए उच्चतर कार्यबल सहभागिता प्रदर्शित करती हैं। रोजगार के लिए महिला प्रवासियों में से अनपढ़ और अर्द्ध-साक्षर महिला प्रवासियों ने महत्वपूर्ण रूप से अधिकतर हिस्से पर कब्जा किया हुआ है, विशेष रूप से कलकत्ता, मुम्बई और दिल्ली के मेट्रोपॉलिटन शहरों में।

हालाँकि इन संकेतों के साक्ष्य हैं कि जैस-जैसे विशेषाधिकार वर्ग की महिलाएँ उच्चतर शिक्षा तक पहुंच पा रही हैं, वे आधुनिक व्यवसायों के कार्यबल में बढ़-चढ़कर प्रवेश कर रही हैं। यद्यपि शहरों में महिलाएँ संगठित क्षेत्र में गम्भीरतापूर्वक बहुत ही कम प्रतिनिधित्व पा सकी हैं, उनकी पदस्थितियां हाल के वर्षों में सुधरी हैं, विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र में।

आंतरिक विस्थापन

जनजातीय और ग्रामीण क्षेत्रों में वृहद विकास परियोजनाओं, जैसे बांध और विशिष्ट आर्थिक क्षेत्रों (एसईज़ेड), के कारण विस्थापन से संबंधित समस्याएं हैं। इन परियोजनाओं को घेरकर किए जाने वाले अनेक अभियानों में महिलाओं ने बढ-चढ़कर हिस्सा लिया है। (आप पहले

ही महिलाओं द्वारा सामूहिक लामबंदी और प्रतिरोध के बारे में इस पाठ्यक्रम के खण्ड 2 की इकाई 4 में पढ़ चुके हैं।)

ऐसी परिस्थितियों में आजीविकाओं के छिन जाने से प्रवसन पर जनजातीय महिलाओं की निर्भरता बढ़ती जा रही है। परंपरागत अधिकारों के छिन जाने से काम का बोझ बढ़ा है। वे यौन हिंसा, शोषण और मानव व्यापार के अधीन आ गई हैं। राज्य संस्थाओं से लेकर बिल्डर्स और भूस्वामियों तक वे तमाम शक्तियों और हितों के संघर्षों में पिस रही हैं।

यह तर्क दिया जाता है कि आपदाओं (बाढ़, सूखा, दंगे) के प्रभाव पूर्णतया विभेदकारी होते हैं। जहां कहीं ये घटित होती हैं, पूर्ववर्ती संरचनाएं और सामाजिक परिस्थितियां निर्धारित करती हैं कि समुदाय के कुछ सदस्यों को ये अधिक महँगी पड़ेंगी। (उन अंतरों में, जो निर्धारित करते हैं कि ऐसी आपदाओं से लोग कैसे प्रभावित होंगे, से एक जेंडर है।) सामान्यतया महिलाओं की निम्नतर स्थिति, आपदा वाली परिस्थितियों में तमाम प्रकार के बहिष्करण और दुर्बलताओं में बदल जाती है। कम गतिशीलता और सूचनाओं तक निम्नतर पहुंच का तात्पर्य होता है कि राहत संसाधनों को प्राप्त करने वालों में महिलाएँ प्रायः आखिरी पायदान पर होंगी। अनौपचारिक और कृषि क्षेत्रों में भी महिलाओं का प्रतिनिधित्व गैर-आनुपातिक है, जबकि यही क्षेत्र आपदाओं से सबसे बुरी तरह प्रभावित होने वाले क्षेत्र हैं। यह बात राहत और पुनर्वास के उनके दावे को भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है। इस प्रकार महिलाएँ बेरोजगारी की उच्च दरों का अनुभव करती हैं जो आगे परिवार और समुदाय में उनकी सौदेबाजी की शक्ति को कम कर देता है। पुरुषों से भिन्न, वे प्राथमिक तौर पर परिवारों का देखभाल करने वाली होती हैं अतः कार्य के लिए प्रवास कर पाने में सक्षम नहीं होतीं। संरचनात्मक पक्षपात और जेंडर भेदभाव को शामिल करते हुए इन सभी कारकों का परिणाम यह होता है कि क्षतिपूर्ति और मुआवजे निरपवाद रूप से पुरुषों की ओर निर्देशित कर दिए जाते हैं।

कार्य के लिए लघु-अवधि (जो मौसमी भी हो सकता है) का आंतरिक प्रवास अब ग्रामीण भारत का व्यापक लक्षण बन चुका है जो ग्रामीण क्षेत्रों में अपर्याप्त आजीविका अवसरों के निरंतर संकट को दर्शाता है। महिलाएँ अब काम के लिए बहुत अधिक संख्या में बाहर जा रही हैं। वे न केवल अपने पति या परिवारों के पुरुष सदस्यों के साथ बल्कि काम की तलाश में अकेले या यहां तक कि समूहों में भी बाहर निकल रही हैं। प्रवासी मजदूर सामान्यतया जो भी काम पाते हैं वही करने लगते हैं, अधिकांशतया संविदा के कार्य या आकस्मिक कार्य। अपने घरों से दूर प्रवासी मजदूरों की स्थिति बहुत दयनीय होती है। उन्हें वेतन भी बहुत कम मिलता है। स्वच्छ पानी, शौचालयों, स्वास्थ्य सुविधाओं, सार्वजनिक वितरण प्रणाली तक भी उनकी पहुंच नहीं बन पाती और उन्हें अपनी जरूरत के सामान भी खुले बाजार से बाजार मूल्य पर खरीदने पड़ते हैं। उनके बच्चे भी उनके साथ लगातार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते हैं जिससे वे शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाते।

महिला प्रवासी कामगारों की अवस्थिति

अभाव का सामना करती हुई ग्रामीण तथा जनजातीय क्षेत्रों से महिलाएँ शहरी क्षेत्रों की ओर प्रवसित होती हैं और असुरक्षित असंगठित क्षेत्र में काम करते हुए उनकी तलाश पूरी होती है। वह भी भवन निर्माण, पत्थर कटाई, खाद्य-प्रस्संस्करण, सब्जियां या फल बेचने और घरेलू श्रम जैसी गतिविधियों में काम करती हैं। उनके लिए औपचारिक क्षेत्र में प्रवेश कर पाना कठिन होता है क्योंकि उनके पास जरूरी कौशल नहीं होता या फिर कुशलता प्राप्त करने के लिए जरूरी संसाधन नहीं होता। उनकी प्रवृत्ति होती है कि जो भी कार्य उपलब्ध हो उसे ले लिया जाए और जिसे वे अपने गरीब घरों को चलाते हुए कर भी सकें। परिणामस्वरूप,

महिलाएँ अधिकांशतया घर आधारित, खाद्य पदार्थों या घरेलू उपयोग और यहां तक कि औद्योगिक उपयोग के सामानों के उत्पादन से संबंधित कार्यों में लगी हैं। वे बीड़ी, रोटी और पापड़ बेलती हैं; मसाले पीसती हैं; अचार और भोजन के पैकेट्स तैयार करती हैं; बिन्दी बनाती हैं और छोटी वस्तुएं या महिलाओं द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाली वस्तुएं बनाती हैं। वे वस्त्र उद्योग में भी लगी हुई हैं। फुटकर व्यापारी और निर्यातकों के लिए यह सुविधाजनक होता है कि सिलाई, कसीदाकारी और बुनाई के काम निम्न आर्थिक स्तर वाले मोहल्लों, जो प्रायः अत्यधिक काम की अपेक्षा में होता है, की महिलाओं को दे दें जिससे एक विशिष्ट समय सीमा में पूरा हो जाए।

यह समझने के लिए कि कैसे विकास प्रवसन को प्रेरित करता है और महिलाओं को प्रभावित करता है, निम्नलिखित केस-स्टडी को पढ़िए।

बॉक्स सं. 2.4

केस स्टडीः जनजातीय महिलाएँ और विकास

नाल्को द्वारा विस्थापित की गईं उड़ीसा की जनजातीय महिलाएँ राज्य की सीमाओं के पार आन्ध्र प्रदेश में जाने को मजबूर हुईं और जंगली भूमियों पर 'अवैध अतिक्रमणकारियों' की तरह रह रही हैं। जो सरकार द्वारा 'पुनर्वासित' कर दी गईं थीं उन्हें भी अभी उचित आवास या मुआवजा मिलना बाकी है। यह कहना पड़ेगा कि जनजातियों की परंपरागत प्रणाली ने, जबकि महिलाओं की पहचान श्रम और आय के वितरण के निश्चित जेंडर असंतुलनों, सामाजिक वर्जनाओं और सांस्कृतिक नाश द्वारा हुआ करती थी, उन महिलाओं को, अपनी आजीविका को बनाए रखने में सक्रिय भूमिका देकर और उन्हें ऐसी स्थिति में रखकर कि वे अपने अधिकारों और संसाधनों के लिए सौदेबाजी कर सकें, अधिक सुरक्षा प्रदान की। परम्परागत भूमि आधारित आजीविका प्रणाली ने भी महिलाओं को कृषि और जंगल उत्पादों के संग्रहण में, मवेशियों के प्रबंधन और संबंधित गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की।

उद्योगों ने महिलाओं को, भूमि स्वामित्व और खेतिहर श्रमिक समुदाय दोनों में उनकी बुनियादी आर्थिक भूमिकाओं से विमुख कर दिया है। यह स्थिति अन्य क्षेत्रों में भी सुस्पष्ट है जैसे कि महानदी कोलफील्ड्स (उड़ीसा) के कोयला और लौह अयस्कों के खदान वाले क्षेत्रों में, झारखण्ड की कोल इंडिया खदानों में, महाराष्ट्र के पश्चिमी कोयला क्षेत्रों में, दामनजोड़ी (दक्षिण उड़ीसा) की बॉक्साइट खदानों में और सिंगरेनी कोयला क्षेत्रों (आन्ध्र प्रदेश) में।

जंगल उत्पादों की बिक्री और मवेशियों की देखभाल से जिस नकद प्रवाह तक जनजातीय महिलाओं की पहुंच थी, वह बहुत कम हो गई। इसके बदले, इन महिलाओं को अपने गांवों से मीलों दूर, अपने बच्चों को घरों पर छोड़कर, या तो जंगल उत्पादों का संग्रह करने या फिर मजदूरी की तलाश में जाने के लिए मजबूर होना पड़ा और उन्हें अपने सभी मवेशियों को बेचना पड़ा। बहुत-सी परिस्थितियों में, केवल मौसमी प्रवसन होता था जो कार्य की असुरक्षा, पारिवारिक संबंधों के बिखराव और तमाम सामाजिक खतरों का सामना करने की स्थितियों को बढ़ाता था।

पुनर्वास कालोनियों में और शहरी झुग्गियों में महिलाएँ निजता की कमी, उपयुक्त शौचालयों और शोषणात्मक सामाजिक प्रभावों जैसे कि शराबी पति, पति द्वारा पिटाई और परित्याग जैसे समस्याओं का सामना करती हैं। सांस्कृतिक प्रभावों जैसे कि दहेज प्रथा और बीमारियों के नए स्वरूपों जैसे कि एचआईवी-एड्स और कुपोषण ने जनजातीय महिलाओं को नीरस

कार्यों के विकट स्वरूपों, नकद या संसाधनों तक अप्राप्यता और निर्णय लेने की शक्तियों में उल्लेखनीय कमी तक ला छोड़ा है।

बॉक्स सं. 2.5

महिलाएं जिन्होंने एक समय पर परम्परागत भूमि और जंगल आधारित आजीविका प्रणाली में महत्वपूर्ण आर्थिक भूमिका निभाई थी, और परिणामस्वरूप अपेक्षाकृत उच्च सामाजिक स्तर का जीवन जिया था, अब शहरों में घरेलू नौकरानियों, (अब तक जनजातीय समुदायों में ऐसा प्रचलन नहीं है), आकस्मिक भवन निर्माण मजदूरों, छिटपुट व्यापारियों और फेरीवाले और व्यावसायिक वेश्याओं की तरह काम कर रही हैं या फिर उन्हें 'व्यर्थ' गृहिणी की तरह घरों तक में सीमित कर दिया गया है। औद्योगिक विस्थापन के प्रभाव का तात्पर्य इस तरह जनजातीय महिलाओं की आर्थिक और सामाजिक दोनों स्थितियों के सम्पूर्ण रूपांतरण और दुर्दशा की तरह आया।

विस्थापित आदिवासी महिलाएँ भी छोटे-मोटे व्यापारों या अन्य व्यवसायों में जाने को मजबूर हुईं लेकिन साक्षरता या कौशलों में उनकी कमी और इन क्षेत्रों में सहभागिता के प्रति सामाजिक वर्जना ने उन्हें अन्य शोषणात्मक स्थितियों में डाल दिया।

शिक्षा और कौशल प्रशिक्षण की कमी के कारण महिलाएँ औपचारिक क्षेत्र में अपना स्थान नहीं बना सकीं लेकिन साथ के साथ इसने अनौपचारिक क्षेत्र में संविदा कर्मी या अनियत मजदूर के रूप में अत्यन्त शोषणात्मक स्थितियों में उनके समावेशन का रास्ता खोल दिया। महिलाओं की मजदूरी हमेशा पुरुषों की मजदूरी से कम रही है और उनके लिए सवेतन छुट्टियों का कोई प्रावधान नहीं होता, यहां तक कि गर्भावस्था या बच्चे के जन्म के समय भी। महिलाओं को कोई उपकरण भी नहीं दिए जाते और कार्यस्थलों पर शौचालयों और अन्य सुविधाओं की कमी होती है। महिला कामगार, खदान मालिकों, ठेकेदारों और अन्य पुरुषों द्वारा शारीरिक और यौन शोषण के प्रति भी भयभीत रहती हैं। उन्हें घर वापस आने में मीलों चलकर आना पड़ता है और रास्ते में वे दुराचरण के प्रति असुरक्षित होती हैं।

खदान उद्योग में महिलाएँ तमाम पेशेगत बीमारियों, जिसमें श्वास समस्याएं, सिलिकोसिस, ट्यूबरकुलोसिस, ल्यूकीमिया, आर्थराइटिस और प्रजनन संबंधी समस्याएं शामिल होती हैं, से घिर जाती हैं। वे विषैले और खतरनाक तत्वों के बीच, किसी सुरक्षा उपायों तक पहुंच के बिना, कार्य करती हैं। भूतकाल में महिलाएँ अपने शिशुओं को अपने साथ खेतों में या जंगलों में ले जा सकती थीं। अब खदानों में काम करने वाली महिलाओं को अपने बच्चों को, बिना किसी देखभाल के, पीछे घर छोड़कर आना पड़ता है। यदि वे किसी तरह अपने बच्चों को खदान तक ले भी जाती हैं तो उन्हें बच्चों को उच्च स्तर के धूल और ध्वनि प्रदूषण में छोड़ना पड़ता है और खदानों में होने वाले विस्फोटों में उनके बच्चे निरंतर दुर्घटना के जोखिम में होते हैं या खेलते हुए खदान के गड्ढों में उनके गिर जाने का डर होता है।

जब उद्योग बन्द हो जाते हैं और कर्मचारियों की छंटनी हो जाती है, पुरुष खाली हो जाते हैं और काम का पूरा बोझ आदिवासी महिलाओं पर आ गिरता है, तब उसे अपने परिवार को सहारा देने के लिए काम करना ही पड़ता है। खदान समुदायों में रहने वाली औरतें अवशेषों और बड़ी खदान कंपनियों के बेकार कचरे को उठाने के काम को भी अपनी आजीविका कमाने के रूप में अपना लेती हैं, प्रायः गैर कानूनी ढंग से, और लगातार कंपनी गार्डों, स्थानीय माफियाओं या पुलिस द्वारा उनका उत्पीड़न किया जाता है। अपने अयस्कों की बिक्री के लिए उन्हें स्थानीय व्यापारियों की दया पर भी निर्भर रहना पड़ता है।

आगे बढ़ने से पहले निम्न अभ्यास को कीजिए।

अपनी प्रगति जाँच कीजिए

1) प्रवासी महिलाओं की आर्थिक भूमिकाएं क्या हैं?

2) महिलाओं पर प्रवसन के प्रभावों पर एक टिप्पणी लिखिए।

इकाई के इस आखिरी अनुभाग में आप इस इकाई का सारांश पढ़ सकते हैं।

2.9 सारांश

इस इकाई ने शहरीकरण की प्रक्रिया, प्रवसन और शहरीकरण, प्रवसन के कारण, शहरी वृद्धि के प्रभाव और मुद्दों के बारे में गहन छानबीन की। यह अवलोकन किया गया कि भारत में जनसंख्या में वृद्धि हो रही है परन्तु अन्य शहरी क्षेत्रों की बजाय मेट्रोपॉलिटन शहरों की ओर लोगों के प्रवसन में वृद्धि ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में अधिक थी, जो कई सामाजिक-पारिस्थितिकीय समस्याओं में वृद्धि कर रही है। इसका प्रभाव न सिर्फ शहरी अवसंरचना और नागरिक सुविधाएं प्रदान करने पर पड़ा है बल्कि शहरी क्षेत्रों में प्रजनन संबंधी और बाल स्वास्थ्य सेवाओं पर भी पड़ा है।

2.10 शब्दावली

शहरीकरण : जनसांख्यिकीय दृष्टि से, शहरीकरण का अर्थ एक अवधि के दौरान शहरी जनसंख्या के कुल जनसंख्या से अनुपात में वृद्धि से है।

प्रवसन : मनुष्यों द्वारा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में किया जाने वाला शारीरिक गमन।

प्रवासी : कोई व्यक्ति जो एक देश के भीतर प्रवसित होता है; संभव है वे ऐसे लोग हों जो काम की तलाश में जैसे कि मौसमी काम की तलाश में प्रवसन करते हैं।

आजीवन प्रवासी : प्रवासी वे होते हैं जिनकी गणना उनके जन्म के स्थान से इतर कहीं और होती है। अंतर-जनगणनीय प्रवसन दिए गए वर्ष के लिए जन्म स्थान के संप्रत्यय पर आधारित है।

अंतर जनगणनीय प्रवासी : दिए गए वर्ष के लिए जन्म स्थान के संप्रत्यय पर आधारित।

मेट्रोपॉलिटन शहर : शहरी क्षेत्र का एक विशाल नगर जो किसी देश या क्षेत्र के लिए एक महत्वपूर्ण आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक केन्द्र हो और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और संचार के लिए भी महत्वपूर्ण केन्द्र हो।

मेगापॉलिटन शहर : मेट्रोपॉलिटन क्षेत्रों के आसपास फैली हुई श्रृंखला। एक करोड़ या उससे अधिक की जनसंख्या वाला शहर।

आकर्ष कारक : जो प्रवासियों को किसी नई अवस्थिति के लिए आकर्षित करे जैसे कि रोजगार, शिक्षा के अवसर।

विकर्ष कारक : वह बल जो लोगों को किसी स्थान से जाने के लिए विवश करे जैसे कि रोजगार और शिक्षा के अवसरों की कमी।

2.11 इकाई के अंत में कुछ प्रश्न

1) संक्षेप में व्याख्या करें:
   - अ) शहरीकरण की प्रक्रिया
   - ब) प्रवसन और शहरीकरण
   - स) प्रवसन की प्रवृत्तियां
   - द) शहरीकरण की प्रवृत्तियां
2) प्रवसन के कारणों की गणना करते हुए व्याख्या कीजिए।
3) प्रवसन के परिणामों पर चर्चा कीजिए।
4) प्रवासी महिलाओं की आर्थिक भूमिका पर चर्चा कीजिए।

2.12 संदर्भ

Ahuliwalia, Montek (2011). Prospects and Policy Challenges in the Twelfth Plan, Economic and Political Weekly, May 46 (21).

Mehta, Ashok (1962). "The future of Indian Cities: National Issues and Goals" in Roy Turner (ed). in Urban Future, Berkeley: University of California Press.

Bhagat R.B. (2011). Emerging Pattern of Urbanisation in India: Economic and Political Weekly: Vol. XLVI No. 34, August 20.

Bose, Ashish (1980). India's Urbanisation – 1901, 2001, New Delhi: Tata McGraw – Hill Publishing Company Limited.

Business World – Dec 2011

Business World – Dec 2001

Census of India. 1961, 1971, 1981, 1991, 2001 and 2011

Economic Times (2011). Quality of Life Survey, December, 11

Fawcelt T.J, Slew- Ean K. and Peter C. (1984). Urbanization Migration and the Status of Women in Fawcelt T.J. et.al (eds) Women in the Cities of Asia: Migration and Urban Population: West View Press, Inc. Canada, U.S.A.

India City Competitiveness Report (2011). Institute for Competitiveness, India, www.competitiveness.in/2011/12/press-release-india-city-competitiveness-report-2011 (last accessed on 28th Nov. 2014).

Jain Devaki and Banerjee Nirmala (1985). Tyranny of the Household, New Delhi: Shakti Books.

Joshi, Heather (1976). Prospects and Case for Employment of Women in Indian Cities, Economic and Political Weekly, Vol. 11;Aug 7th.

Kundu A. (2007). Migration and Exclusionary Urban Growth in India: Sixth Dr. Chandra Sekaran Memorial Lecture, Mumbai International Institute for Population Sciences.

Kundu A. (2011). Methods in Madness: Urban Data from 2011 Census, EPW, Vol-XLVI No. 40, October 01.

National Institute of Urban Affairs (1988). Women Urban Poverty and Economic Development, Research Publications Study Series, No. 43, New Delhi.

Paul, Tinku (2009). Women Empowerment Through Work Participation, New Century Publications.

Raju, Saraswati (1981). Sita for the City a Socio Graphical Analysis of Female Employment in Urban India. Discussion Paper, New York; Syracuse, Syracuse University.

Registrar General and Census Commissioner (2006). Population Projects for India and States. (2001-2026); Report of the Technical Group on Population Projections Constituted by National Population Commission of the Registrar General and Census Commissioner, New Delhi.

Shramshakti (1988). Report of the National Commission on Self-Employed Women in the Informal Sector; New Delhi.

Singh (1978). Rural Urban Migration of Women among the Urban in India, Causes and Consequences Social Action 28(4): 326-56.

Times of India: IMRB Quality of Life Survey, Dec. 2011.

United Nations (2009). The World Urbanization Prospects, The 2009 Revision: New Yorks, Department of Economic and Social Affairs Population Division.

2.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- Shramshakti (1988). Report of the National Commission on Self-Employed Women in the Informal Sector; New Delhi.

- Singh (1978). Rural Urban Migration of Women among the Urban in India, Causes and Consequences Social Action 28(4): 326-56.
- United Nations (2009). The World Urbanization Prospects, The 2009 Revision: New Yorks, Department of Economic and Social Affairs Population Division.

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY